जानें जल संरक्षण, संवर्धन व जलवायु परिवर्तन का सम्बन्ध

डॉ0 प्रदीप सलाल
हवालबाग (अल्मोड़ा)

पूरे विश्व में जल संरक्षण व संवर्धन की मूल समस्या का समाधान तभी हो पायेगा जब हम जल के ह्रास व पेय जल की कमी की समस्या की ओर विस्तृत व संम्पूर्ण पहलूओं को ध्यान में रखकर योजनाएँ बनाएँ क्योंकि स्थानीय स्तर पर जल संरक्षण व संवर्धन उतना ही आवश्यक है जितना जलवायु परिवर्तन व ग्लोबल वॉर्मिंग के कारण ऋतु परिवर्तन से जुड़े मुद्दों को हल करने के प्रयास।

विभिन्न प्राकृतिक स्रोत जैसे–ग्लेश्यिर, हिमालय पर्वत, जल स्रोत, कुएँ, तालाब, नदी, झरने आदि पूरे विश्व में जल के स्थायी साधन हैं। जल संरक्षण तथा संवर्धन की विभिन्न योजनाएँ बनाना एवम् उनका क्रियान्वयन करना जल संरक्षण के प्रति हमारी चेतना का उदाहरण है।

कुमाऊँ हिमालय के अन्तर्गत जल स्रोतों का पुनर्उद्भवन ही गैरहिमानी नदियों को बचाने का एकमात्र रास्ता है। अतः जल स्रोतों के संवर्धन, संरक्षण एवम् पुनर्उद्भवन के प्रयास आवश्यक हो गये हैं तभी हम अपनी जीवन दायनी नदियों को बचा पायेंगे।

कुमाऊँ हिमालय क्षेत्र में अनेक नदियाँ गैरहिमानी हैं और प्राकृतिक जल स्रोतों से ही उत्पन्न होती हैं, इन नदियों में कोसी, गोला, पश्चिमी रामगंगा, पनार, लोधिया, गोमती आदि नदियाँ मुख्य हैं।

नदियों का कम होता जलस्तर

निम्न हिमालय क्षेत्र की गैर हिमानी गोला नदी का अध्ययन (बरतारिया, 1988) बताता है कि इस नदी का दैनिक वाहित जल की औसत दर 1958–1964 के दौरान 8809 क्यूबिक मीटर थी जो कि 1965–1981 के दौरान 5007 क्यूबिक मीटर प्रति दिन रह गयी, इस प्रकार केवल आधे दशक में इस नदी में 35 प्रतिशत प्रवाहित जल दर घटी है। यह विषय–विशेष अध्ययन सुझाता है कि हिमालय क्षेत्र की गैर हिमानी जल धाराओं की जल प्रवाह दर लगातार घट रही है।

प्राकृतिक जल स्रोतों का सूख जाना

प्राकृतिक जल स्रोत अधिकांश हिमालय क्षेत्र में शहरी व ग्रामीण क्षेत्र की पेय जल आपूर्ति के प्राथमिक स्रोत हैं। विगत कई वर्षों से इन प्राकृतिक जल स्रोतों की प्रवाह दर (डिस्चार्ज) कम हो रहा है जिसके चलते कई जल स्रोत वर्षा के बाद कुछ ही महीने जल दे पाने के कारण ऋतु आधारित हो गये हैं तो कई जल स्रोत पूर्णतः सूख चुके हैं।

झीलों का कम होता जल स्तर

झीलें जल की महत्वपूर्ण स्रोत हैं। कुमाऊँ क्षेत्र की झीलों में नैनीताल, भीमताल, नौकुचियाताल, सात ताल, खुरपाताल मुख्य हैं। इन झीलों का जल स्तर भी कई मानवीय कारणों से कम हो रहा है। झीलों के जल ग्रहण क्षेत्र में आवासों, होटलों, सड़कों आदि का बिकास व अन्य मानवीय क्रियाकलापों के चलते इन झीलों में लगातार गाद की वृद्धि होने से जल स्तर में कमी हो रही है।

धरातलीय बहते जल पर मानवीय प्रभाव

कुमाऊँ हिमालय के अध्ययन बताते हैं कि मानवीय क्रियाकलापों, तथा वर्षा की तीव्रता, कम समय में अधिक वर्षा होना (जो कि जलवायु परिवर्तन के कारण हुआ है) के कारण वर्षा के दौरान

पर्वतीय ढलानों में धरातलीय जल की बहने की दर व तीव्रता में वृद्धि हुई है। पर्वतीय क्षेत्र में जहाँ वन आवरण लगातार कम हुआ है वहीं मानवीय क्रियाकलापों के परिणामस्वरूप सड़क भवनों आदि के निर्माण आदि ने धरातलीय भाग को अधिकांशतः स्थाई तौर पर ढक लिया है इस प्रकार से मानवीय क्रियाकलापों व जलवायु परिवर्तन के कारण वर्षा के दौरान पर्वतीय क्षेत्र के पहाड़ी ढलानों पर धरातलीय जल की मात्रा व तीव्रता में वृद्धि हुई है जो कि वर्षा का अपव्यय है जिससे वर्षा जल बिना भूमिगत हुए पर्वतीय क्षेत्र की ढलानों से बह जाता है, क्योंकि वर्षा की मात्रा व तीव्रता व पर्वतीय क्षेत्र के किसी भाग में जल पारगम्य चट्टानों व जल अपारगम्य चट्टानों की उपलब्धता का प्राकृतिक जल स्रोतों के जल प्रवाह (डिस्चार्ज) से सीधा सम्बन्ध है। किसी क्षेत्र में पारगम्य चट्टानें होने के बावजूद भी उक्त कारक वर्षा जल के भूमिगत होने में बाधक हैं। इस प्रकार भूमिगत जल स्तर में कमी होने के कारण कुमाऊँ पर्वतीय क्षेत्र के परम्परागत प्राकृतिक जल स्रेत (नौला, धारा, प्राकृतिक जल चश्मे आदि) सूख रहे हैं व कई जलस्रोत बरसाती होते जा रहे हैं।

संपूर्ण देश व साथ ही वैश्विक स्तर पर योजनायें बनाने का प्रयास कर उनको क्रियान्वित करना अत्यन्त आवश्यक है, तभी हम अपने प्राकृतिक जल स्रोतों सहित नदियों, तालाबों, हिमनदों व पर्वतों का संवर्धन व सागरों व महासागरों का आवश्यक सन्तुलन कर पायेंगे।

उत्तराखण्ड में कोसी नदी के अध्ययन बताते हैं कि पाँच दशक पूर्व जहाँ यह नदी 225.6 किमी लम्बी थी अब केवल 49 किमी तक सिमट गयी है क्योंकि पूरे कोसी जल ग्रहण क्षेत्र में 1917 प्राकृतिक जलस्रोत ऐसे हैं जिन पर आधारित 21 छोटी सहायक नदियाँ तथा 49 अन्य सहायक नदियाँ लगभग सूख चुकी हैं क्योंकि इनके आधार जलस्रोत सूखते जा रहे हैं।

इसी प्रकार देहरादून में बहने वाली रिस्पना नदी सूखती जा रही है, सिंचाई विभाग के अनुसार रिस्पना के कैचमेंट एरिया लंढौर में केवल एक से दो क्यूसेक पानी बताया जा रहा है जो कि काफी चिन्तनीय विषय है। रिस्पना को पुनर्जीवित करने के लिए ड्रीम प्रोजेक्ट जैसे प्रयास जारी हैं।

नदियों को पुनर्जीवित करने के प्रयास जितने आवश्यक हैं उतने ही आवश्यक कार्यान्वयन पूर्व नियोजन भी है, उदाहरण के लिए यदि हमें पर्वतीय क्षेत्र के किसी जलस्रोत को पुनर्जीवित करना है, उसका भौगोलिक सर्वेक्षण के माध्यम से चट्टानों की प्रकृति एवम् संरचना व चट्टानी परतों का झुकाव आदि मालूम करना आवश्यक होगा जिसके अभाव में लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया जा सकता, इस क्रम में जलस्रोत के जलग्रहण क्षेत्र में दो प्रकार का उपचार 1– वानस्पतिक व 2– यान्त्रिक उपचार दिया जाता है वानस्पतिक उपचार के अन्तर्गत किसी क्षेत्र की ऊंचाई, मिट्टी आदि को ध्यान में रखकर बड़े पैमाने पर वृक्षारोपण किया जाता है वहीं यान्त्रिक उपचार के तहत चाल–खाल, खन्तियों, चैक डैम का निर्माण किया जाता है। यान्त्रिक उपचार के माध्यम से वर्षा जल को शीघ्र भूमिगत होने के लिए मजबूर किया जा सकता है किन्तु इसके लिए उचित दिशा निर्देशन होना आवश्यक है, जैसे यदि किसी जलस्रेत के जलग्रहण क्षेत्र में खन्तियाँ बनाई जानी हैं जो कि प्रायः ढाल की दिशा जिस ओर जलस्रोत स्थिति है, बनाये जाते हैं, यदि वहाँ पर चट्टानो की परतों का झुकाव ढाल की दिशा की ओर है तो वर्षा के दौरान खन्तियों से वर्षा जल भूमिगत नहीं हो पायेगा यदि वहाँ खन्तियाँ जलस्रेत वाले ढाल के विपरीत बनी होती तो वर्षा जल निश्चित रूप से भूमिगत होता जिससे समय व धन दोनों का सद्पयोग सुनश्चित हो पाता।

विगत कई वर्षो से यहाँ पर अधिकांश प्राकृतिक जल स्रोत, भूमिगत जल के कम होते स्तर के कारण सूख रहे हैं। स्थानीय स्तर पर जल संरक्षण व संवर्धन की योजनायें सराहनीय हैं, किन्तु जिस प्रकार से पूरे विश्व में पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं, उस आधार पर जल संरक्षण संवर्धन व नदी संरक्षण जैसी छोटी योजनाओं पर शोध अनुसंधान व उनका क्रियान्वयन के बाद पुनर्उद्भवन जैसे मॉडल पर्यावरण से जुड़े हर मुद्दे पर बनाने होंगे, साथ ही साथ भूमण्डलीय तापन व जलवायु परिवर्तन की दिशा को भी कुछ सीमा तक मोड़ना होगा तभी जल संरक्षण व संवर्धन से

सम्बन्धित छोटी योजनायें सतत रूप से चल पायेंगी। अन्यथा ऋतु परिवर्तन, भूमण्डलीय तापन, जलवायु परिवर्तन, वर्षा की अनियमितता जैसी समस्यायें इन स्थानीय स्तर पर अथक प्रयास से प्राप्त उपलब्धियों को लम्बे समय तक टिकने नहीं देंगी।

ग्लोबल वार्मिंग व जलवायु पवितर्न की स्थिति

पृथ्वी में जीवन योग्य पर्यावरण निर्मित होने के बाद से ही पृथ्वी पर विभिन्न प्रकार के पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रमाण मिलते हैं, किन्तु ये सभी परिवर्तन पूर्ण रूप से प्राकृतिक थे, इन परिवर्तनों के फलस्वरूप पृथ्वी पर एक पूर्ण सन्तुलित पर्यावरण का विकास हुआ जिसमें वायुमण्डल के सभी तत्व सन्तुलित अवस्था में थे, लेकिन पृथ्वी का बाह्य भाग (धरातल सहित) एवम् इसका वायुमण्डल सदैव प्राकृतिक परिवर्तनों से प्रभावित रहा है, लेकिन वर्तमान वैश्विक जलवायु परिर्वतन जिसमें बड़े पैमाने पर मानवीय क्रियाकलापों के फलस्वरूप पृथ्वी का प्राकृतिक पर्यावरण गम्भीर रूप से प्रभावित हो रहा है जो कि चिन्ता का विषय है।

पृथ्वी पर वायुमण्डल की सबसे निचली परत जिसमें दैनिक मौसम सम्बन्धित घटनायें होती हैं, में वायुमण्डलीय दशायें एवम् सन्तुलन सदैव जीवनोपयोगी पूर्ण प्राकृतिक व शुद्धता से परिपूर्ण रहा होगा। इस प्रकार पृथ्वी को घेरे हुए वायुमण्डल मानव व अन्य जीवधारियों के लिए जीवन से परिपूर्ण व लाभदायक रहा होगा, इसी शुद्धता की मात्रा के कारण आज भी पृथ्वी पर जीवन फल–फूल रहा है। लेकिन वर्तमान में मानव ने विज्ञान व तकनीकी के क्षेत्र में आशातीत सफलताएँ हाँसिल कर ली हैं। जिसे हाँसिल करना, मानवीय दृष्टिकोण से मानव विकास व गुणवत्तापूर्ण जीवन के लिए, अतिआवश्यक था। मानव पृथ्वी के तल पर सदैव एक क्रियाशील प्राणी रहा है, वह अपने जीवन को सरल बनाने के लिए पृथ्वी के धरातल में आवश्यक परिवर्तन करता आया है। इस दृष्टिकोण से कुमारी एलन सी0 सेम्पल ने मानव भूगोल विषय के अन्तर्गत कहा है कि **मानव भूगोल क्रियाशील मानव व अस्थिर पृथ्वी के बीच परिवर्तनशील सम्बन्धों का अध्ययन है।** इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि मानव के उद्भव से लेकर वर्तमान समय तक, मानव जीवन के लिए संघर्ष करता रहा है, वही दूसरी ओर मानव जीवन की कठिनाईयों से पार पाकर जीवन को अधिक सरल व सुखद बनाने के प्रयास करता आया है, जो कि मानवीय स्वभाव का मुख्य गुण है।

पृथ्वी की पूर्ण प्राकृतिक पर्यावरण की अवस्था जिसमें वायुमण्डल की सभी गैसें सन्तुलित अवस्था में थी, पेड़–पौधे, जंगल, सुन्दर शुद्ध फल–फूलों से परिपूर्ण थे, पशु–पक्षी शुद्ध प्राकृतिक अवस्था में अत्यन्त विशुद्ध स्वस्थ जीवन व्यतीत करते थे, जल स्रोत, छोटी नदी से लेकर झरने व नदियाँ शुद्ध जल को प्रवाहित करते थे, प्रकृति व जीवों की ये अवस्था पूर्ण प्राकृतिक थी। प्राचीन ग्रन्थों में पृथ्वी पर मानव के पूर्ण प्राकृतिक जीवन के प्रमाण मिलते हैं जिनमें मानव के प्राकृतिकरण की अवस्था की कल्पना की जा सकती है।

जब से मानव विकास की ओर उन्मुख हुआ और उसने प्रकृति का मानवीयकरण करना प्रारम्भ किया लगभग तभी से मानवीय क्रियाकलापों का नगण्य प्रभाव प्रकृति पर पड़ना प्रारम्भ हो गया, जैसा कि कहा गया है मानव धरातल पर एक क्रियाशील प्राणी है वह स्थिर रहकर जीवन यापन नहीं कर सकता, अपने इसी स्वभाव के कारण मनुष्य ने प्रकृति की बाधाओं से पार पाने का अथक प्रयास लगातार किया है, जिसके चलते मनुष्य ने जीवन के लगभग हर क्षेत्र में आशातीत सफलतायें अर्जित की हैं, तथा वर्तमान विकास व वैज्ञानिक युग की अवस्था को प्राप्त किया है, जो अत्यन्त सराहनीय है और वर्तमान परिस्थितियों में आवश्यक भी हो गया है, लेकिन मनुष्य के विभिन्न कार्यकलापों के फलस्वरूप एक नयी परिस्थिति का जन्म हुआ जिसे प्रदूषण कहें या उससे जनित पर्यावरणीय समस्यायें।

पर्यावरणविदों के अनुसार जब लाभदायक पर्यावरण अपना हानिकारक प्रभाव छोड़ना प्रारम्भ करता है तो इसे पर्यावरण प्रदूषण कहा जाता है। मनुष्य की विकास यात्रा व नये वैज्ञानिक खोजों ने

जहाँ मानव को एक सुविधाजनक, सुखद, अवकाशपरिपूर्ण जीवन उपलब्ध कराया है वहीं छोटे पैमाने पर धीरे–धीरे पैदा हुआ प्रदूषण आज इतना गम्भीर व बड़ा विषय हो गया है कि वैश्विक स्तर पर विभिन्न सम्मेलनों के बावजूद भी कोई स्पष्ट हल न निकलने के कारण लगातार बढ़ता ही जा रहा है। प्राकृतिक रूप से शुद्ध वायु, जल, मिट्टी, शान्त वातावरण इतना अधिक प्रदूषित हुआ है कि पृथ्वी के अनेक भाग गम्भीर रूप से प्रभावित हुए हैं, यही नहीं अपितु मानवीय हस्तक्षेप की दृष्टि से अक्षुण्ण प्राकृतिक स्थलों के पर्यावरण को भी प्रभावित करने लगा है।

आज की सर्वाधिक गम्भीर पर्यावरणीय समस्याओं में वैश्विक तापमान वृद्धि व ग्लोबल वॉर्मिंग के कारण जलवायु परिवर्तन की स्थिति हैं जो वायु प्रदूषण की चरम अवस्था की द्योतक है साथ ही पृथ्वी के अनेक स्थलीय भागों में बड़े पैमाने पर जल की उपलब्धता को भी प्रभावित कर रही है इसलिए ग्लोबल वार्मिंग मानव जाति के अस्तित्व के लिए भी एक प्रमुख मुद्दा बन गया है।

ग्रीनहाउस गैसें–साधारणतया शुद्ध और शुष्क वायु में ऑक्सीजन–21 प्रतिशत, नाइट्रोजन–78 प्रतिशत, आर्गन 0•93 प्रतिशत, तथा कार्बनडाइऑक्साइड मात्र 0.03 प्रतिशत तथा अति न्यून मात्रा में हाइड्रोजन, हिलियम, ओजोन, निऑन, जेनान आदि उपस्थित रहती हैं। ग्रीनहाउस गैसें जो उष्मा को अवशोषित करती हैं, भूमण्डलीय उष्मीकरण के लिए उत्तरदायी होती हैं, जिनमें सर्वाधिक ग्रीनहाउस प्रभाव उत्पन्न करने वाली गैस कार्बनडाइऑसाइड है क्योंकि यह एक भारी गैस है तथा गुरूत्वाकर्षण शक्ति के कारण भू सतह के पास धूमती रहती है इसके अतिरिक्त नाइट्रस ऑक्साइड, मीथेन, क्लोरो फ्लोरो कार्बन, कार्बनमोनोऑक्साइड, वाष्प, ओजोन आदि अन्य ग्रीनहाउस प्रभाव उत्पन्न करने वाली गैसें हैं।

ग्रीनहाउस प्रभाव–पृथ्वी के वायुमण्डल में ग्रीनहाउस गैसों मुख्यतः कार्बनडाइऑक्साइड की मात्रा उद्योगों, वाहनों व अन्य मानवीय क्रियाकलापों के कारण अधिक मात्रा में उत्सर्जित हो रही है। जिसके प्रभाव से वायुमण्डल में इन गर्म गैसों की मात्रा बढ़ती ही जा रही है। वायुमण्डल में सूर्य की किरणें ऊष्मा का प्रमुख साधन हैं, वायुमण्डल सूर्य की किरणों से सीधे गर्म नहीं होता बल्कि सूर्य की किरणें धरातल से परावर्तित होकर वायुमण्डल को गर्म करती हैं इसप्रकार धरातल के सम्पर्क में आने वाली वायु धरातल से धीरे–धीरे ऊष्मा ग्रहण करती है। क्योंकि कार्बनडाइऑक्साइड एक भारी गैस है जो कि पृथ्वी सतह पर सर्वाधिक मात्रा में होती है एवम् उष्मा का सर्वाधिक अवशोषण करने वाली गैस है, पृथ्वी की सतह पर ताप अधिक होने का कारण कार्बनडाइऑक्साइड का सर्वाधिक मात्रा में पाया जाना है। इस प्रकार कार्बनडाइऑक्साइड धरातल पर सर्वाधिक ग्रीनहाउस प्रभाव उत्पन्न करने वाली गैस है। यही कारण है कि ऊंचाई बढ़ने के साथ–साथ कार्बनडाइऑक्साइड भी कम होती जाती है फलतः तापमान भी कम होता जाता है।

वैश्विक ताप वृद्धि– पृथ्वी की सतह पर इन ग्रीनहाउस गैसों की मात्रा बढ़ती ही जा रही है जिससे वैश्विक ताप वृद्धि अर्थात पृथ्वी सतह व महासागरों के औसत तापमान में वृद्धि हो रही है। एक अध्ययन के अनुसार पृथ्वी की सतह के निकट विश्व की वायु के औसत तापमान में 2005 तक 100 वर्षो के दौरान अधिकतम 0.74^0 सेल्सियस और न्यूनतम 0.18^0 सेल्सियस की वृद्धि हुई है। ऐसा आकंलन किया गया है कि अगले 50 या 100 वर्षो में धरती का तापमान इतना बढ़ जायेगा कि जीवन के लिए इस धरती पर कई सारी मुश्किलें बढ़ जायेंगी।

सभी प्रकार के जलवायु व भू–मण्डलीय तापन सम्बन्धी अध्ययन यह बताते हैं कि वैश्विक स्तर पर कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन में कमी नहीं आ रही है। विभिन्न अध्ययन मॉडलों को आधार मानते हुए वैज्ञानिकों ने भविष्य में जलवायु सम्बन्धी परिवर्तनों पर निम्न भविष्यवाणियाँ की हैं।

(1) जलवायु की प्राकृतिक अवस्थाओं में परिवर्तन सम्भावित है जो कि देखा व महसूस किया जा सकता है जिससे भविष्य में बाढ़ व सूखे का खतरा बढ़ जायेगा। सर्द काल में कमी आयेगी और ग्रीष्म काल बढ़ेगा।

(2) वर्ष 2100 तक पृथ्वी के औसत तापमान में 2^0 सेल्सियस तक वृद्धि हो जायेगी।

वैश्विक ताप वृद्धि के प्रभाव–साधारण शब्दों में धरती की सतह के पास वायुमण्डल के तापमान में लगातार स्थाई वृद्धि वैश्विक तापन या ग्लोबल वार्मिंग है। इस गम्भीर विषय पर आज वैश्विक स्तर पर चिन्तन और स्थाई हल निकाला जाना आवश्यक है, वैश्विक तापन का स्पष्ट प्रभाव वैश्विक जलवायु परिर्वतन के रूप में देखा जा सकता है, जिसके स्पष्ट प्रभाव निम्न रूप में देखे जा सकते हैं:

(1) **ध्रुवीय बर्फ व उच्च हिमालयी बर्फ का पिघलना**–एक अध्ययन के अनुसार जिस गति से वैश्विक तापन हो रहा है उसे आधार मानते हुए यह अनुमान लगाया जा सकता है कि सन् 2030 तक ध्रुवीय बर्फों के पिघलने के कारण ही विश्व में समुद्र तटीय भाग 25 सेमी तक समुद्री जल से निमग्न हो सकते हैं। इस प्रकार दुनिया के तटीय देशों का अस्तित्व समाप्त हो सकता है।

(2) **जैव विविधता का ह्रास**–वैश्विक तापन के कारण जीवधारियों की कई प्रजातियाँ विलुप्ति के कगार पर हैं। एक अध्ययन के अनुसार भविष्य में ध्रुवीय भालू, बाल्टीय ओरियो (एक पक्षी) व अनेक प्रकार की मछलियों की प्रजातियाँ नष्ट हो जाएंगी।

इसी प्रकार मैदानी क्षेत्रों की वनस्पति भी तेजी से पर्वतीय क्षेत्रों में जड़ें जमाने लगी हैं। कुमाऊँ क्षेत्र में पर्वतीय तलहटी के तराई भावर की अनेक वनस्पतियाँ जैसे साल व खजूर आदि पर्वतीय क्षेत्रों में अपनी जड़ें जमाने लगी हैं। वहीं उच्च हिमालयी क्षेत्र में हिम आवरण का ऊंचाई की ओर खिसकना जिससे सेब जैसे फलों के उत्पादन का क्षेत्र उत्तर की ओर खिसक रहा है। राष्ट्रीय कृषि संस्थान के द्वारा प्रस्तुत एक प्रतिवेदन के अनुसार सेबों के उत्पादन का क्षेत्र 30 किलोमीटर उत्तर की ओर खिसक चुका है। ग्लोबल वार्मिंग के अन्य प्रभावों में कृषि उत्पादन में कमी व क्षेत्रीय परिवर्तन, विभिन्न प्रजातियों के विलुप्त होने का खतरा आदि सम्मलित है।

भूवैज्ञानिकों के अनुसार वर्तमान परिस्थिति में आकाशीय बल एवम् पृथ्वी (जिसमें वायुमण्डल भी शामिल है) की प्राकृतिक सन्तुलन क्षमता, ग्लोबल वार्मिंग व जलवायु परिवर्तन को नियन्त्रित करते रहते हैं, भूवैज्ञानिकों के अनुसार हिमयुग और अन्तराल युग (गर्म युग) धरती पर आते–जाते रहते हैं लेकिन यह सिद्ध हो चुका है कि वर्तमान युग में जलवायु परिवर्तन का कारण मानवीय कारक हैं।

अतः निष्कर्ष स्वरूप वर्तमान ग्लोबल वार्मिंग के परिणामतः भविष्य में जलवायु की प्राकृतिक अवस्थाओं में परिवर्तन सम्भावित हैं जो कि देखा व महसूस किया जा सकता है जिससे भविष्य में बाढ़ व सूखे का खतरा बढ़ जायेगा। क्योंकि जलवायु परिवर्तन या ग्लोबल वार्मिंग, विश्व के सभी देशों के द्वारा उत्पन्न पर्यावरण प्रदूषण का परिणाम है अतः किसी एक देश द्वारा दूसरे देश पर दोषारोपण या व्यापार नीति द्वारा दूसरे देश में प्रदूषण परक उद्योगों से निर्मित वस्तुओं, कलपुर्जों का उपयोग कर प्रदूषण मुक्त होना इस समस्या का स्थाई हल नहीं हो सकता। अतः यहाँ हमें समस्या का समाधान उस समस्या में ही खोजना चाहिए अतः वैश्विक स्तर पर पर्यावरण संरक्षण करने के साथ ही पर्यावरण मित्र तकनीकी विकसित करने के लिए एक मत होकर इस विषय पर ठोस रणनीति बनाई जानी चाहिए।

जहाँ एक ओर ग्लोबल वॉर्मिंग व जलवायु परिवर्तत के कारण मौसम चक्र व वर्षा की मात्रा व वर्षण समय में भारी अनियमितितायें आ रही हैं वही मानवीय विकास प्रक्रियाओं के माध्यम से प्राकृतिक पर्यावरण व जल संसाधनों को भारी नुकसान हुआ है।

आज पर्यावरण संरक्षण एवम् जल संवर्धन इतना आवश्यक है कि प्रत्येक नागरिक के अधिकार व कर्तव्य के साथ इसे जोड़ा जाय जिसके अर्न्तगत प्रत्येक व्यक्ति की यह स्वैच्छिक

जिम्मेदारी हो कि प्रतिदिन के कार्यों में एक कार्य पर्यावरण संरक्षण व जल संवर्धन के लिए करे तथा उसका लेखा या रिकार्ड (ग्रीन कार्ड) भी रखे जो उसके अधिकारों का संरक्षण कर सके व उसे एक जिम्मेदार एवम् पर्यावरण के प्रति सचेत नागरिक सिद्ध कर सके।

अतः पूरे विश्व में जल संरक्षण व संवर्धन की मूल समस्या का समाधान तभी हो पायेगा जब हम जल की उपलब्धता व पेय जल की कमी की समस्या की ओर विस्तृत व संम्पूर्ण पहलूओं को ध्यान में रखकर योजनाएँ बनाएँ क्योंकि स्थानीय स्तर पर जल संरक्षण व संवर्धन उतना ही आवश्यक है जितना जलवायु परिवर्तन व ग्लोबल वॉर्मिंग के कारण ऋतु परिवर्तन से जुड़े मुद्दों को हल करने के प्रयास क्योंकि जल की उपलब्धता का सीधा सम्बन्ध किसी भी क्षेत्र की हरियाली से है, अतः कहा जा सकता है कि जल संरक्षण, संवर्धन योजनाएं व वैश्विक जलवायु परिवर्तन आपस में जुड़े हुए मुद्दे एक हैं, हम किसी एक की अवहेलना या समाधान करके मूल समस्या से निपटने का प्रयास नहीं कर सकते हैं। अतः इन दोनों पहलुओं की ओर ध्यान आकृष्ट कर आवश्यक अध्ययन अनुसंधान व विस्तृत कार्ययोजनायें बनाकर स्थानीय स्तर से लेकर संपूर्ण देश व साथ ही वैश्विक स्तर पर योजनायें बनाकर उनका क्रियान्वयन करना अत्यन्त आवश्यक है, तभी हम अपने प्राकृतिक जलस्रोतों सहित नदियों, तालाबों, हिमनदों, पर्वतों का संरक्षण, संवर्धन व सागरों व महासागरों का आवश्यक सन्तुलन बना पायेंगे।

किसी राष्ट्र की राजभाषा वही हो सकती है जिसे उसके अधिकाधिक निवासी समझ सकें।

आचार्य चतुरसेन शास्त्री